सिर्फ एक दिन

हिन्दी ADDA

कबीर संजय

सिर्फ एक दिन

दरवाजा खोलते ही नेहा का ध्यान जिस पहली चीज पर गया उसने उसे परेशान कर दिया। रात के दस बज चुके थे। नीचे बाइक की बुड़-बुड़ थमी। उसे स्टैंड पर खड़ी करने की आवाज आई। और फिर सीढ़ियों पर थके हुए कदमों की पदचापें। इन आवाजों को वह अपनी साँसों की तरह ही पहचानती थी। सच तो यह है कि घर के अंदर रजाई में दुबकी हुई वह कब से बाहर की आवाजों पर कान गड़ाए बैठी थी। बुड़-बुड़ करती हुई बाइक की कोई आवाज पहले तो दूर से पास आती हुई लगती। ऐसा लगता कि वह करीब आकर रुकने वाली है, लेकिन नहीं, फिर वो दूर हो जाती। बाइक पर

चलते-चलते किसी आदमी का एक्सीलेटर कम, तो किसी का ज्यादा घूम जाता। वो गौरव की बाइक की आवाज और उसके एक्सीलेटर की लय तक को पहचानती थी। इसलिए जब एक खास किस्म की लय पर बुड़-बुड़ करती हुई बाइक पहुँची और बुड़-बुड़ बंद हो गई तो रात की अन्य आवाजों में उसने उस आवाज पर ज्यादा गौर करना शुरू कर दिया। बाइक स्टैंड पर लगने की एक हल्की सी आवाज भी उसे सुनाई पड़ गई। बाइक खड़ा करते समय गौरव जब अपने पंजे स्टैंड पर लगाकर गाड़ी को पीछे से खींचता था तो एक हल्की सी सींइइ की आवाज आती थी। रात के इस खामोश अँधेरे में वो इस हल्की सी आवाज को भी सुन सकती थी।

शाम से ही कभी भौंक कर और कभी आसमान की तरफ मुँह उठाकर रोने वाले कुत्ते भी थक चुके थे। उल्लुओं की कई प्रजातियाँ रात में शिकार पर निकल चुकी थीं। ये रात सर्दियों की थी। दस बजे तक चारों तरफ सन्नाटा छा चुका था। उल्लू की खी-खी की आवाज रात के सन्नाटे को भंग कर देती थी। इस मनहूस आवाज को सुनकर नेहा को हल्की कँपकँपी छूटने लगती। रजाई में सात्विक को दुबकाए वह गौरव की बाइक पर ही कान लगाए हुए थी। और जब बाइक रुकी और सीढ़ियों पर गौरव के थके कदमों की आवाज आने लगी तो वह खुद-ब-खुद उठकर दरवाजे पर जाकर खड़ी हो गई। उसे इंतजार गौरव की मिस कॉल की थी।

अपनी कल्पना की आँखों से वह देख रही थी। बाइक को स्टैंड पर लगाने के बाद गौरव ने अपना मोबाइल फोन निकाला होगा। मोबाइल में कॉल लॉग खोलकर उसने 'जान' का नंबर ढूँढ़ा होगा। फिर उसने कॉल का बटन दबा दिया होगा। 'साथिया, मध्यम-मध्यम तेरी गीली हँसी', रिंग टोन इतनी ही बजेगी कि नेहा फोन काट देगी।

रात में दरवाजा खुलवाने के लिए दोनों की तरफ तय यह कोड काफी पुराना था। गौरव ने पहली सीढ़ी चढ़ी और उसने जान के नंबर पर कॉल का बटन दबा दिया। नेहा का मोबाइल बोल पड़ा, 'साथिया, मध्यम-मध्यम तेरी गीली हँसी'। कहीं सात्विक की नींद न खुल जाए, नेहा ने अपने मोबाइल को कस कर हथेलियों के बीच दबा लिया। दरवाजे पर हल्की दस्तक हुई और उसने दरवाजा खोल दिया।

दरवाजा खोलते ही जिस पहली चीज पर उसकी नजर गई उस पर उसे हल्की सी हँसी भी आई और उसने उसे परेशान भी कर दिया। दाहिने हाथ में हेलमेट पकड़े और बाएँ हाथ की एक उँगली में बाइक की चाभी फँसाए गौरव दरवाजे के अंदर घुसते ही अपना मफलर उतारने लगा। उसे एकटक देखते हुए नेहा रास्ते से हटना भी भूल गई। गौरव एक पल तक उसके हटने का इंतजार करता रहा। फिर उसके बगल से निकल गया।

अंदर लगी कुर्सी पर बैठकर पहले उसने अपने दस्ताने उतारे। सर्दी के चलते दस्ताने के अंदर भी हाथ सुन्न से हुए जा रहे थे। बाइक चलाते समय हवा भी एकदम हाथों पर सीधे लगती है। कई बार तो क्लच पकड़ना और एक्सीलेटर लेना भी मुश्किल हो जाता है। दस्ताने उतारने के बाद अपनी हथेलियों को मुँह के पास लाते हुए वह उन्हें रगड़ने और मुँह से फूँकने लगा। उसके मुँह से भाप जैसी गरम-गरम दिखने वाली हवा निकल रही थी। उसके नथुनों से भाप निकलती हुई दिख रही थी। अपने पैरों को ऊपर उठा-उठाकर उसने जूते उतारे और हाथ धोने बाथरूम में चला गया। और नेहा उसे एकटक देखती रही।

शाम को सूरज ढलते ही ओस पड़ने लगी थी। सूखने के लिए डाले गए कपड़ों को उतारने में अगर जरा भी देरी कर दी तो फिर वे ओस से गीले हो जाते। अगर कहीं रात भर ओस में पड़े रह गए तो उन्हें सूखने के लिए डालना न डालना बराबर हो जाता।

ओस ने गौरव की जैकेट के कंधों को भी हल्का सा गीला कर दिया था। उसके दस्ताने भी नम हो गए थे। गौरव की मूँछें भी ओस से गीली हो चुकी थीं। इन्हीं में वो एक छोटी सी बात भी छिपी थी जिन पर नेहा का ध्यान टिक गया था। गौरव की भीगी हुई मूँछों में एक बाल उसे सफेद दिखाई पड़ा। शेव करने के बाद गौरव हमेशा अपनी मूँछों पर एक वक्त खर्च करता। उन्हें काटता, तराशता और सँवारता। उस समय वह शीशे में अजब-अजब तरीके से अपने मुँह को टेढ़ा करता। कभी होंठों को गोल करता। कभी दोनों होंठों को भींचकर मूँछों की लंबाई को एकसार करने की कोशिश करता। नेहा गौरव को मूँछें सँवारते एकटक देखा करती थी। तरह-तरह से उसके मुँह बनाने को देखते-देखते उसे गौरव पर प्यार आ जाता। लेकिन, आज पहली बार उसने गौरव की मूँछों में एक सफेद बाल देख लिया। पका हुआ बाल। सफेद। कतरे हुए काले बालों में अलग से दिखने वाला। मूँछों के भीगा हुआ होने के चलते ही वह नेहा को इतना अलग से नजर आया। पहले तो वह मन ही मन हँसी, 'अरे ये तो इतना बड़ा हो गया। फिर वो परेशान हो गई। अभी से मूँछों के भी बाल पकने लगे।'

इतने में गौरव हाथ और मुँह धोकर बाथरूम से आ गया। नेहा को इतनी देर तक अपलक वहीं पर खड़े देखकर वह कुछ चिढ़ सा गया। कुछ रूखी सी आवाज में गौरव बोला, 'तुम सो जाओ, मैं खाना निकाल लूँगा।'

नेहा को बुरा लगा, 'नहीं, अभी गरम करती हूँ, मैं जाग क्यों रही हूँ।'

किचन का दरवाजा खोलकर वह फट से पहुँची। गैस लाइटर की खट हुई और स्टोव से नीली-नीली लौ निकलने लगी। उसने सब्जी गरम करने के लिए रख दी। रात में

कितनी देर हो जाती है। नेहा ने गौरव को गरम-गरम रोटियाँ खिलाने की सोची थी। सर्दियाँ इतनी थी कि गूँदे हुए आटे को फ्रिज में रखने की जरूरत नहीं थी। उसने तुरंत ही आटे की लोई बनाई, उस पर हल्के से पलैथन लगाया और रोटी बेलना शुरू कर दिया। इतने में गौरव जाकर सात्विक के पास बैठ गया। उसने धीरे से रजाई हटाकर सात्विक को देखा। उसकी अँगुलियों को छूते हुए उसने उसके हाथों को अपने हाथ में ले लिया। सात्विक की गुलाबी उँगलियों की मुट्ठियाँ भिंची हुई थीं। जैसे उसने किसी बहुत जरूरी चीज को अपने हाथों में कस कर पकड़ रखा हो।

ऐसे ही वह गौरव की उँगलियों को भी पकड़ लेता था। गौरव ने उसकी मुट्ठियों की जकड़ थोड़ी ढीली करके उसमें अपनी एक उँगली पकड़ाने की कोशिश की। इतने में ही सात्विक अपनी माँ की गरमाहट के दूर होने का अंदाज कर कुनमुनाने लगा। धीरे-धीरे कुनमुनाते हुए अचानक ही उसने जोर पकड़ लिया। गौरव उसे थपकियाँ देने लगा। लेकिन, सात्विक कुछ सुनने के मूड में नहीं था। उसके रोने की आवाज तेज हो गई। थपकी देकर उसे चुप कराने में नाकाम हुए गौरव ने थोड़ा चिढ़ते हुए, जैसे कि सात्विक के उठने और रोने में भी नेहा का दोष हो, रसोई में आकर कहा, 'मैंने कहा था न कि तुम सो जाओ, मैं खाना खा लूँगा।'

नेहा ने प्रतिवाद किया, 'अरे मैं तो चाहती थी कि तुम्हे गरमागरम रोटियाँ खिलाऊँ।'

'नहीं, गरम-गरम रोटियाँ तुम्ही खा लिया करो।' गौरव की चिढ़ में और इजाफा हो गया।

'कोई बात नहीं, अभी सो जाएगा, मैं रोटी बना देती हूँ', नेहा को भी बात बुरी लगी।

'नहीं तुम जाकर उसे सँभाल लो। मैं देख लूँगा।'

इतने में सात्विक का रोना और तेज हो गया। गौरव के अंदाज से दुखी होने और बुरा मानने के बाद भी नेहा को सात्विक के रोने पर कोई न कोई कार्रवाई तो करनी ही थी। उसने झगड़ा मुल्तवी कर दिया। चुपचाप हाथ धोया और गैस की ही नीली लौ में अपने हाथों को सुखाने लगी। अब गीले और ठंडे हाथों से तो बच्चे को पकड़ने नहीं जा रही है वो। हाथों के थोड़ा गरमाते ही वह सात्विक के पास आ गई। भुनभुनाहट उसकी भी बिना ब्रेक वाली शुरू हो गई, 'पहले तो सोता हुआ बच्चा जगा देंगे, जरा भी देर देख नहीं सकते...'

रजाई को एक किनारे से सरकाकर वह अंदर घुस गई। सबसे पहले तो उसने सात्विक के पोतड़ों की जाँच की। पोतड़े सूखे थे। अक्सर ही रात में गीला करने के बाद सात्विक ऐसे ही रोने लगता था। नेहा की तो आदत ऐसी हो गई थी कि रात में नींद खुली नहीं कि सबसे पहले उसके हाथ पोतड़ों पर जाते थे। सूखे हैं, हाँ, सूखे हैं। गीले हैं तो पोतड़ों को बदलने में ही काफी वक्त लग जाता।

रजाई में घुसते ही नेहा ने सात्विक को अपने सीने से चिपका लिया। बच्चा उसे अपने से ज्यादा गरम लग रहा था। कहीं बच्चे को ठंड न लग जाए। लेकिन, धीरे-धीरे उसकी गरमी में बच्चे को आराम मिलने लगा। बच्चा बेचैनी से अपने मुँह से माँ के सीने को टटोलने लगा। माँ ने अपनी टॉप के ऊपर के तीन बटन खोल दिए। बच्चा मुँह से टटोलता हुआ अपने रुदन में भी अपनी बेचैनी प्रगट करने लगा। बाईं करवट लेटी नेहा ने अपनी दाहिनी छाती सात्विक के मुँह में डाल दी। रोने की इच्छा से वशीभूत पहले तो वह मुँह में उन्हें लेने से इनकार करता रहा, फिर वह उसे चूसने लगा। कुछ ही देर में उसका रोना रुक गया और माँ के शरीर से रिसने वाले जीवन रस को पीकर उसके अंदर जीवन, संतोष और सुकून का संचार होने लगा।

सात्विक तीन महीने का था। माँ के शरीर के इसी हिस्से को छू कर, उसका सामीप्य महसूस कर और उससे निकलने वाले जीवन रस का पान करके उसे अपने सभी भयों से छुटकारा मिल जाता था। अपनी माँ के इसी दूध से उसके जीवन की डोर बँधी हुई थी। इन्हीं की सांत्वना से उसका दिल शांत हो जाता। नहीं कोई है, मैं अकेले नहीं हूँ। घबराहट कम हो जाती। माँ की गरमी ही उसे जिलाए हुए थी।

नेहा ने मन ही मन हिसाब लगाया, 'नहीं तीन महीने नहीं, दो महीने पच्चीस दिन हुए हैं। इस महीने की 24 तारीख को तीन महीने हो जाएँगे।' इसी तरह एक-एक दिन गिनकर वह सात्विक को बड़ा कर रही थी। सात्विक सीजेरियन ऑपरेशन से पैदा हुआ था। वो अर्ध बेहोशी की हालत में थी, फिर भी उसे सात्विक के पैदा होने का दिन काफी कुछ छोटी-बड़ी बारीकियों के साथ याद है। उसकी आँखें खुल नहीं पा रही थीं जब डॉक्टर ने बच्चे को पेट से बाहर निकालने के बाद उसे अपने हाथों में लेते हुए उसके सामने करते हुए पूछा था, 'तो तुम्हे क्या चाहिए, लड़का या लड़की।'

'अपने सोचने से क्या होता है। '

'हाँ, लेकिन माँ को तो लड़के से ही ज्यादा प्यार होता है।'

'हाँ, पर लड़की माँ की सहेली बन जाती है। सबका का ख्याल रखती है।'

'चलो, बहस छोड़ो।' डॉक्टर हँस पड़ी। बच्चे को हल्के से उसके मुँह के पास लाकर बोली, 'चलो अब इस लड़के को प्यार करो।'

अपनी अधखुली आँखों से बच्चे को देखते हुए नेहा ने उसके माथे को चूम लिया।

तो यही है वो, जिसने उसे कई रातों से जगाए रखा है। कभी एक करवट लेटती तो कभी दूसरी करवट। कहीं वो दब न जाए। बीच-बीच में वो अपने हाथ-पैर भी चलाने लगता। पेट में एक अजब सा तूफान उठ जाता। तो कभी एकदम शांत हो जाता। जैसे कोई चुपचाप जाकर कहीं छुप गया है। तब वो गौरव का हाथ पकड़कर अपने पेट पर रखती।

'देखो, यहीं पर है, लेकिन चुप बैठा है।'

और कभी कुछ ही देर में उसके पैर फिर चलने लगते, वो गौरव को फिर जगाती, 'देखो यहाँ पर पैर चल रहे हैं उसके।' गौरव अधनींद में अपने हाथ पेट पर वहीं रख देता। कभी कुछ समझता तो कभी बिना कुछ समझे ही बोल देता।

'हाँ-हाँ, चल रह तो रहे हैं पैर।'

लेकिन, नेहा उसकी आवाज के निरुत्साह को भाँप जाती। नहीं, इसे कुछ समझ नहीं आया है। ये तो ऐसे ही बोल रहा था। पता नहीं ये कुछ महसूस कर भी पाता है कि नहीं। जिस चीज से नेहा इतना उत्साहित होती है, छूकर भी उसकी संवेदना को वो पकड़ नहीं पाता। नेहा रूठ जाती। करवट बदलकर वह सोने की कोशिश करती। गौरव पीछे से उसके कंधे को पकड़कर सहलाता रहता। काफी देर के मान के बाद वह उसकी तरफ अपना मुँह करती। फिर गौरव उसका पेट पकड़कर तो कभी पेट पर हल्के से हाथ रखे हुए सो जाता। इस सांत्वना से उसे भी हल्की झपकी भी आ जाती। तो यही है वो जो इतने दिनों से अपनी उपस्थिति से हैरान किए हुए था।

बच्चे का नाम उन्होंने पहले ही सोच रखा था। रेवा। हाँ, रेवा ही होगा उनकी बेटी का नाम। रेवा क्या है। यह नर्मदा नदी का ही एक नाम है। रेवा को वे कई अलग-अलग तरह से उच्चारित करके देखते। हाँ, रेवा नाम ही ठीक रहेगा। लेकिन, रेवा को कहीं पीछे छोड़ते हुए जो पैदा हुआ वह बेटा था। यह एकदम आगंतुक था। इसके आने की कोई उम्मीद नहीं थी। कोई इंतजार नहीं था। इसलिए नए सिरे से उसके नाम की खोज शुरू हुई। कोई सटीक नाम नहीं मिलने की शर्त पर फिलहाल उसका नाम सात्विक चल रहा था। अभी। आगे बदल भी सकता है। अपने मन में यही सब हिसाब लगाते हुए नेहा को नींद आ गई।

यूँ तो नींद रात भर सात्विक की तरह ही कुनमुनाती रही। रात में अचानक ही सात्विक की कभी नींद टूट जाती। अपने हाथों की मुट्ठियाँ बंद करते हुए वह तेज रोने की तैयारी करने लगता। नेहा नींद में ही पहले तो उसके पोतड़े जाँचती। सूखे पोतड़े का स्पर्श पाते ही नींद में ही नेहा अपनी जैकेट की जिप खोलती और अपने वक्षों के बीच सात्विक को छुपा कर उसके मुँह में दूध डाल देती। अपने मुँह में दूध को चुभलाते-चूसते सात्विक को फिर से नींद आ जाती। और अगर पोतड़े सूखे न हों तो नींद में ही नेहा के हाथ यंत्रवत चलते। उसके पोतड़े बदल दिए जाते। बिस्तर के ऊपर पॉलीथीन की शीट लगी हुई थी। शीट के ऊपर बिछी चादर बदलनी पड़ती। इसी तरह कुनमुनाते हुए नेहा की नींद पूरी होती। बस, तीन महीने पूरे हो जाएँ तो डाइपर पहनाना शुरू कर दूँगी। यही सोचकर वह संतोष करती।

सुबह किचन में हुई खड़खड़ से ही नेहा की नींद टूट गई। लेकिन वह आँख बंद करके पड़ी रही। कुछ ही देर में बिस्तर के सामने मेज पर चाय के दो कप रखे हुए थे। गौरव उसके बालों पर हाथ फेरने लगा, 'उठो चाय पी लो।'

उसने अपनी उनींदी आँखें खोलीं। चाय के दो बड़े मग। सुबह की चाय उन दोनों को ही बड़े से मग में पीना पसंद था। मग से उड़ती हुई भाप हवा में कई तरह की लहरें बनाती हुई ऊपर की तरफ उठ रही रही थी। कुछ दूर तक तो इन पर नजर पड़ती लेकिन फिर वो हवा में विलीन हो जातीं। बिस्तर से निकलकर नेहा ने शॉल ओढ़ ली। मुँह धोकर वह देर तक गरम-गरम चाय के मग को अपने हाथ में पकड़े रही। चाय के मग से वह कभी-कभी अपने गालों और माथे को भी सेंकने लगती। तो कभी अपनी हथेलियों के पीछे तरफ के हिस्से को भी मग से लगाकर सेंकती।

खूब सर्दियों के दिन थे। ऐसी सर्दियाँ नेहा ने कभी देखी नहीं थीं। ठंड से काँपता अँधेरा रोज रात भर अपने आँसू टपकाता रहता। सुबह तक ओस जम जाती। सुबह जब सूरज भगवान अपनी पीली-पीली आँखें खोलते तो पता चलता जैसे कि हरी-हरी घास पर कोई सफेद-भूरी राख छिड़क गया है। सूरज की गर्मी से धीरे-धीरे राख पिघलने लगती। धूप खिल जाती। लेकिन, हवा में इतनी ठंड होती कि धूप में बैठना भी कई बार मुश्किल हो जाता। हवा जैसे सारे कपड़ों को छेदती हुई शरीर में घुसने को होती। दिन भर खिली धूप का दम दो बजे के बाद टूटने लगता। शाम को चार बजते-बजते तो ऐसा लगने लगता जैसे कि शरीर धीरे-धीरे ठंडा होने लगा है। किसी भी चीज से उसे गर्मी नहीं मिल पा रही है। किसी तरह से खुद को गरम रखते वो चाय तैयार करती। शाम होते ही बिस्तर में पनाह लेने के अलावा कोई चारा नहीं बचता।

यह देहरादून की सर्दियाँ थीं। इसकी वो आदी नहीं थी। सर्दियों के मौसम में वो दस कदम आगे की चीज न दिखाई देने वाले कोहरे को झेलती रही थी। जहाँ दिन-दिन भर सूरज के दर्शन नहीं होते। सूरज की उम्मीद में कई-कई दिन निकल जाते। लेकिन, यहाँ तो सूरज बिला नागा हाजिर है। हालाँकि, इसके बाद भी सर्दियों से राहत नहीं।

हाँ, कभी-कभी जब वो इस धूप में छत के ऊपर चली जाती तो सामने मसूरी चमकती हुई दिखाई पड़ती। मसूरी के सिर के तुरंत ऊपर बैंगनी रंग की छटा बिखरी होती। जबकि, ऊपर नीले रंग का आसमान अपने अनंत विस्तार से झूमता रहता। इस दृश्य से वह मुग्ध हो जाती। सामने देवदार के घने पेड़ों के बीच छुपे हुए घर के कॉटेज दिखाई पड़ते। मसूरी की पहाड़ियों की रीढ़ पर ही थोड़ा दाहिनी तरफ उसे धनोल्टी के पहाड़ दिखाई पड़ते। यहाँ पर कुछ दूर तक सपाट मैदान जैसा था। उसके एक तरफ सुरकंडा देवी की पहाड़ियाँ थीं। चारों तरफ अलग-अलग रंग बिखरे पड़े थे। मसूरी से ज्यादा ऊँचाई पर होने के चलते पहले सुरकंडा और धनोल्टी में बरफ गिरती। एक बार सुरकंडा की पहाड़ियों पर वे आगे की तरफ चंबा और पीछे की तरफ देहरादून की घाटियों का नजारा कर चुके थे। सुरकंडा देवी की चोटी से आगे की तरफ हिमाच्छादित पहाड़ों की एक झलक दिखती है। ऐसा लगता है कि जैसे कहीं आसमान में अचानक से ही बरफ के पहाड़ अपने नुकीले कोन बनाते हुए खड़े हो गए हों। धुँधली-धुँधली सी उनकी ऊँचाइयाँ कहीं गुम हो जाती। तो कहीं वे चमकीले बादलों के रंग से होड़ करते। उनके बीच से उड़ते बादल उन्हें भी अपने आगोश में लेते। धीरे-धीरे उन्हीं में उठने वाले बादल उन्हीं को अपने में समेट लेते। बरफ के पहाड़ों का अस्तित्व छिप सा जाता। फिर चमकीले सफेद बादलों का गाढ़ापन बढ़ जाता। धीरे-धीरे करियाते बादलों का वजन अचानक ज्यादा हो जाता। और वे धरती पर अपना प्यार लुटाने लगते। यहाँ पर बरसते बादलों को देखकर ऐसा लगता कि जैसे उन्हें कहीं जाने की जल्दी नहीं है। बेहद इत्मीनान से। बरसते। कभी लय तेज हो जाती तो कभी धीरे। किसी कुशल संगीतकार की तरह उनकी धुनें अपने आरोह-अवरोह में गूँजती रहती। लेकिन, संगीत का क्रम नहीं टूटता। मन भर बरसकर बादल भी अपना अस्तित्व खो चुके होते और फिर से वहीं चमकदार सूरज सब के ऊपर हँसता हुआ आसमान में दिखाई पड़ने लगता।

उसकी किरणों से अभी-अभी तुरंत जमीन पर गिरी बूँदें हीरे की तरह चमक उठतीं। इसी बारिश के बीच कभी आसमान अपनी चाँदी मसूरी और धनोल्टी की पहाड़ियों पर बिखेरने लगता। देहरादून में जमकर बारिश होती और जब थोड़ी देर बाद आसमान खुलता तो सामने की पहाड़ियाँ ऐसी चाँदी की तरह चमकने लगती जिस पर सुनहरी

रोशनी छोड़ी जा रही हो। धुले हुए आसमान में एक-एक चीज बेहद साफ दिखाई पड़ती। कभी हवा में अटकी बूँदों पर इंद्रधनुष टँग जाते। नेहा के लिए यह इतना वास्तविक था कि कई बार तो शाम की धूप से चमकती मसूरी के होटलों की खिड़कियों के शीशे भी उसे दिख जाते। सूरज की किरणों की चमक से खिड़कियों के शीशे से कौंध जाते।

पहले पहल जब वे देहरादून आए थे, तो हर दम उन्हें घूमने की धुन लगी रहती। किसी भी छुट्टी पर घर बैठने वाले वे थे नहीं। सुबह से ही बाइक पर निकल जाते। शहर के बाहर किसी चलते हुए पानी में पैर डालकर बैठे रहने, किसी झरने में अपनी हथेलियों को भिगोने के शौक से भरे-पूरे वे हर समय उल्लास से खिलखिलाते रहते।

चाय पीते हुए गौरव ने अखबार का पन्ना पूरा खोल लिया। एक-एक हेडिंग पर निगाह टिकाते हुए वह अखबार की खबरों में उलझा हुआ था। इतने में ही नेहा की निगाह फिर वहीं पर जा टिकीं जहाँ पर कल रात में वे उलझ गई थीं। अखबार में तल्लीन गौरव की मूँछों के सफेद बाल को उसने एक बार फिर गौर से देखा। इस समय मूँछें एकदम सूखी हुई थी। रात की तरह भीगी नहीं। इसलिए सफेद बाल काले बालों में काफी कुछ छुप सा गया था। लेकिन, अब नेहा को उसका पता मालूम था। उसने गौर से देखा, हाँ, उसका एक बाल सफेद हो गया है। फिर उसने और गौर किया तो कनपटियों पर भी एकाध सफेद बालों की झलक उसे दिखाई पड़ी। वह एकटक उन बालों को देखती रही।

नेहा गौरव को तब से जानती है जब गौरव की मूँछों की केवल एक बारीक सी रेख निकली हुई थी। उन काले बालों के छोर सुनहरे से लगते थे। सुनहरे बाल कभी जाहिर हो जाते तो कभी छिपे रहते। वो एकदम लड़का सा ही था। वो खुद भी अपने बालों में दो चोटी करके और स्कर्ट पहनकर स्कूल जाने वाली लड़की थी। एक ही मोहल्ले के होने के चलते दोनों एक-दूसरे को जानने तो लगे लेकिन जान-पहचान तभी हुई जब दोनों का एडमीशन यूनीवर्सिटी में हो गया। पढ़ाई अभी बीच में ही थी कि दोनों ने आगे के जीवन की योजनाएँ बनानी शुरू कर दी। एक ही इंस्टीट्यूट से दोनों ने एमबीए किया। देहरादून में गौरव को एक कंपनी से ऑफर मिला तो उसने यहीं पर नौकरी ज्वाइन कर ली। देहरादून में नौकरी का ऑफर है, यही बहाना करके नेहा भी देहरादून चली आई। 'बिन फेरे हम तेरे' की धुन पर दोनों साथ रहने लगे। शादी करनी थी, लेकिन उसके लिए पहले पैसा जुटाना था। उन्होंने अपने आप से ही अपनी शादी की घोषणा कर दी। खूब हंगामा हुआ। मरा हुआ मुँह तक भी न देखने की कसमें परिवार वालों की तरफ से खाई गईं। लेकिन, दोनों ने परवाह नहीं की। एक-दूसरे के साथ से उनकी दुनिया पूरी हो गई थी।

बाद में नेहा को भी एक कंपनी में नौकरी मिल गई। सुबह उठकर दोनों नाश्ता करते, टिफिन तैयार करते और बाइक पर पहले तो गौरव नेहा को उसके दफ्तर में छोड़ने जाता। इसके बाद वह अपने दफ्तर जाता। शाम को नेहा बस पकड़कर घर आ जाती। गौरव रात में देर से आता। तब नेहा उसे इंतजार करते हुए मिलती। उनकी इस दुनिया में अब एक तीसरा व्यक्ति भी आ चुका था। इस तीसरे आदमी के चक्कर में नेहा को अपनी नौकरी गँवानी पड़ी। उन्होंने पूरे महीने भर की बजटिंग फिर से की। हाँ, थोड़ी मुश्किल तो जरूर होगी, लेकिन खींचतान करके घर का खर्च चल ही जाएगा। उस समय उन्होंने इसकी ज्यादा चिंता भी नहीं की। लेकिन अब नेहा को लगने लगा कि गौरव कुछ बदल गया है। कुछ बदलने सा लगा है। हर समय वह उन छोटे-छोटे परिवर्तनों को ढूँढ़ती रहती। जो उसके बदलने का संकेत देते थे। कहीं ये बदलाव मूँछों के इस पके हुए बाल की वजह से तो नहीं। कनपटियों पर दिखने वाली चाँदी जैसे एकाधे बाल तो इसका कारण नहीं।

नेहा न जाने कब तक ऐसे ही एकटक गौरव को देखती और अपने खयालों में गुम रहती। कि तभी सात्विक ने कुनमुनाना शुरू कर दिया। सुबह उठकर कई बार वह बिना आवाज किए बस चुपचाप टुकुर-टुकुर ताकता रहता था। कई बार अपने हाथों-पैरों को ऊपर उठाने की कोशिश करता। कुनमुनाने की आवाज सुनकर पहुँची नेहा ने बड़ा सा मुस्कुराते हुए सात्विक को गुड मार्निंग किया। उसे उठाया और उसके पोतड़े बदलने लगी। इस बीच गौरव भी वहीं आ गया। मुग्ध भाव से नेहा और सात्विक को देखता हुआ वह अपने कपड़े निकालने लगा। सात्विक को दूध पिलाने के बाद नेहा नाश्ता बनाने में जुट गई। गौरव नहाने चला गया।

खाना बनाते हुए नेहा को फिर उन्हीं खयालों ने जकड़ लिया। गौरव बदल गया है। बाथरूम में चुपचाप पानी गिरने की आवाज आती रही। यही गौरव बाथरूम में घुसते ही गाना शुरू कर देता। किशोर कुमार की पूरी एक कैसेट बजाने के बाद ही उसका नहाना पूरा होता। बाथरूम में कभी किशोर कुमार इन ब्लू मूड्स बजने लगता तो कभी सेंटीमेंटल सांग्स ऑफ किशोर कुमार। लेकिन, अब चुपचाप पानी गिरता रहा और नहाने की आवाज आती रही। अब ये गाना क्यों नहीं गाता। क्यों चुपचाप रहता है।

नेहा को उन दिनों की याद बहुत ही अच्छी तरह थी, जब वे किसी पार्क या रेस्टोरेंट में जाकर बैठते थे। सिनेमा हॉल के सामने बने एक रेस्टोरेंट में तो एक बार उन्होंने दस-बारह कप चाय के पिए होंगे। हर आधे घंटे के बाद रेस्टोरेंट का लड़का वहाँ आकर उनसे पूछने लगता, 'साब बिल ले आऊँ।' और गौरव उसे दो कप चाय लाने का आर्डर दे देता। बिल काउंटर पर बैठा दुकानदार उन्हें चिढ़ भरी निगाह से देखता रहा। उसके

पीछे लगे स्टीकर 'उधार प्रेम की कैंची है' और 'कृपया बेकार बैठकर वक्त जाया नहीं करें', उसे ही चिढ़ाते रहे। तब ये, हाँ यही गौरव था। एक मिनट के लिए भी उसका हाथ नहीं छोड़ता था। अपने दोनों हाथों में उसकी एक हथेली को पकड़े हुए वह दुनिया जहान की बातें करता रहता। नेहा की हथेलियाँ पसीने से भीगने लगतीं और वह मन ही मन सोचती कि हे भगवान अब छोड़ भी दो। कभी खींचकर वह अपनी हथेली को छुड़ाती भी तो वह फिर उन्हें अपने हाथों के बीच ले लेता।

अपने हाथों में पकड़कर वह नेहा की एक-एक उँगली का मुआयना सा करता रहता। किस उँगली में चक्र बना है, किसमें भंवर और कहाँ निशान पूरा एक चक्र नहीं बना सके और चक्र बनते-बनते रह गया। एक अँगूठे पर लगी चोट के कारण वहाँ पर फिंगर प्रिंट के निशान भी कट गए थे। फिर वह उसकी हथेलियों के पीछे देखने लगता। हथेलियों के पीछे की फूली नसों को वह छू-छूकर देखता। जहाँ भी नसें उभरी हुई थीं, वहाँ वह हल्के से दबा देता। फिर कहता, 'तुम्हारी नसें नीले रंग की हैं।' फिर वह अपने कमीज की बाजुओं को ऊपर करके दिखाता, 'मेरी नसों का रंग हरा है।'

नसों के इस उलझाव और हथेलियों पर पड़ी रेखाओं के इस जाल से वह निकलने का कोई मौका ही नहीं देता। नेहा के हाथ पसीने से भीगने लगते। किसी तरह से वह पल भर को अपना हाथ छुड़ाती तो वह फिर से उन्हें अपनी हथेलियों के बीच भर लेता।

उन पलों को याद करने के साथ ही नेहा ने एक बार फिर सोचा, अब ये बदल गया है। रसोई में साथ काम करते हुए भी कई बार तो ऐसा लगता कि जैसे कोई अजनबी बगल में खड़ा है और काम करते हुए इस कोशिश में लगा हुआ है कि कहीं छू न जाए। सिर दर्द से फटा जाता और वह एक बार सिर पर हाथ भी न रखता। क्या गोली नहीं खाई, रुको मैं दवा लाता हूँ। अरे एक बार सिर पर हाथ रख दोगे तो कम नहीं हो जाओगे। नेहा के खयालों में इन बातों ने अपनी स्थायी जगह बना ली थी।

टिफिन बनाकर उसने तैयार कर दिया। नाश्ता करते हुए भी गौरव एक शब्द नहीं बोला। बस कामकाजी बातें। शाम को आने में देर होगी। काम बहुत ज्यादा है। आज मीटिंग भी है। पेपर वाला आजकल पेपर देर से फेंक रहा है। कुछ ऐसी ही बातें।

नेहा उसे बहुत कुछ बताना चाहती थी। सात्विक हर दिन बड़ा हो रहा है। अब तो वह जवाब भी देने लगा है। कल तुम उसे नहाते समय देखते। कैसा खिलखिलाने लगता है। बाथटब में हल्के गुनगुने पानी में उसे डालकर नेहा ने नहलाया था। बेबी शैंपू से उसके बाल धोने के बाद कैसे सुनहरे रंग की आभा से चमकने लगे थे। लेकिन, गौरव के पास वक्त नहीं था। दस बजने वाले थे। उसे मीटिंग के लिए देर हो रही थी। बैग में

टिफिन और लैपटॉप रखने के साथ ही उसने सात्विक की उँगलियों को हल्के से छुआ और कुछ सोचते हुए सीढ़ियाँ उतरने लगा। नेहा बालकनी में आकर खड़ी हो गई। गौरव ने बाइक घुमाई और किक मारकर उस पर बैठ गया। धीमी बुड़-बुड़ करती हुई बाइक चल पड़ी। गली के नुक्कड़ तक गौरव दिखाई पड़ता रहा। नेहा चुपचाप उसे देखती रही। हाँ, अब वो पहले जैसा नहीं रहा। पहले गौरव गली के नुक्कड़ पर एक पल को रुकता जरूर था। उसे पता रहता था कि वहाँ बॉलकनी में नेहा खड़ी होगी। वह उसी की तरफ देख रही है। एक मिनट रुककर वह पलट कर देखता और फिर बाइक को आगे बढ़ाता हुआ चला जाता। लेकिन, आज गौरव यहाँ भी नहीं रुका। न ही उसने पलटकर देखा। क्या वो नेहा की मौजूदगी से भी गैर-वाकिफ होने लगा है।

सात्विक के रोने की आवाज आने पर नेहा की तंद्रा टूटी। वह चुपचाप सात्विक के पास चली आई।

दिन बीता। सर्दी और सख्त हो चली। उस रात भी गौरव का इंतजार करते-करते उसकी आँख लग गई। जब मोबाइल पर 'साथिया, मद्धम-मद्धम तेरी गीली हँसी' की धुन सुनाई पड़ी तो उसने सबसे पहले घड़ी की तरफ देखा। रात के साढ़े ग्यारह बज रहे थे। गौरव का इंतजार करते-करते उसकी आँख झपक गई। झगड़ने के पूरे मूड से वह दरवाजे पर पहुँची। दरवाजा खोलकर वह एकटक खड़ी होकर गौरव को देखती रही। गौरव कन्नी काटते हुए अंदर घुस आया। गौरव के दस्ताने उतारते और मफलर हटाने तक उसका अंदाजा पक्का हो गया था। गौरव के मुँह से शराब के तेज भभके आ रहे थे। गौरव ने बैठी हुई थरथराती हुई आवाज में कहा, 'तुम सो जाओ, मैं खाना खाकर आया हूँ।'

चिढ़ी हुई नेहा की चाल में तेजी आ गई। तो अब ये पीकर भी आने लगा है। इसने बताना भी जरूरी नहीं समझा कि खाना खाकर घर आएगा। चुपचाप आकर वह बिस्तर में लेट गई। उसने सात्विक की तरफ मुँह कर लिया और उसे अपने सीने से चिपटा लिया। बच्चा पहले तो कुनमुनाया, फिर माँ की गरमी का अहसास पाकर और भी ज्यादा संतोष के साथ सो गया।

दो

बाइक स्टैंड पर लगाते हुए गौरव का ध्यान सबसे पहले हल्के से भीग चुके अपने दस्तानों पर गया। एक हाथ का दस्ताना उतारकर उसने तुरंत ही मोबाइल निकाला और नेहा को मिस कॉल दी। सीढ़ियाँ चढ़ते हुए दरवाजे तक पहुँचा। एक ही दस्तक में दरवाजा खुल गया। सामने नेहा खड़ी थी। दरवाजा खोलकर वह एकटक उसे देखने

लगी। उसे इस तरह देखते देखकर गौरव चिढ़ गया। 'यह क्या कि दरवाजा खोलकर ऐसे खड़े हो गए कि हाँ क्या काम है। दरवाजा खोलने के बाद अगर कोई बगल नहीं होगा तो कोई अंदर घुसेगा कैसे।' एक पल तक गौरव इंतजार करता रहा। फिर बगल से होकर अंदर आ गया। उसके पीछे-पीछे नेहा ने भी दरवाजे पर कुंडी लगाई और अंदर चली आई।

कुरसी पर बैठकर गौरव ने दस्ताना, मफलर, जूते उतारे। लांग कोट उतारकर कुरसी पर ही टाँग दिया और अंदर जाकर हाथ धोने लगा। हाथ मुँह धोकर वह जब बाहर निकला तब भी नेहा वहीं कुछ असमंजस की स्थिति में खड़ी हुई थी। गौरव के मुँह से निकला, 'तुम जाकर सो जाओ, मैं खाना खा लूँगा।'

'नहीं, मैं खाना गरम कर देती हूँ', नेहा ने कहा।

गौरव कमरे के अंदर चला गया। सात्विक सो रहा था। सोते हुए उसकी मुट्ठियाँ भिंची हुई थी। दोनों मुट्ठियों को उसने अपने गालों के नीचे यूँ लगाया हुआ था, जैसे किसी बात पर विचार की मुद्रा में विद्वतजन अपने मुट्ठियों पर अपनी ठुड्ढी रखते हैं। उन भिंची हुई मुट्ठियों को खुलवाकर उसमें अपनी उँगली फँसाने का प्रयास गौरव करने लगा। इसी से कुनमुनाकर सात्विक जाग गया।

गौरव ने पहले तो सात्विक को थपकियाँ देकर सुलाने की कोशिश की। लेकिन, उसकी नींद टूट चुकी थी। अपनी माँ को पास न देखकर उसने रोना शुरू कर दिया। उसे चुप कराने में नाकाम गौरव उठकर रसोई में चला आया। इसके बाद अपने खाने के लिए रोटियाँ भी उसे ही बेलनी पड़ी। रसोई में ही किसी तरह रात का डिनर निपटाकर जब तक वह कमरे में पहुँचा सात्विक को सुलाते-सुलाते नेहा भी सो चुकी थी। कुछ देर तक वह चुपचाप नेहा और सात्विक को देखता रहा। सात्विक के चेहरे पर फिर से पहले जैसा संतोष था और उसने अपनी मुट्ठियों को कस कर भींचते अपने ठुड्ढी के पास लगा ली थी।

इन्हीं मुट्ठियों को भींचते हुए कभी-कभी वह अपने अपने चेहरे को भी नोंचने लगता। सात्विक के नाखून काटना कम मुसीबत का काम नहीं था। एक तो वह उँगली पकड़ने नहीं रहने देता था। अगर थोड़ी देर पकड़ो भी तो उसके उँगली हिलाने से कटने का खतरा बना रहता था। नेहा अपने दाँतों से ही एक-एक नाखून का अंदाजा करके काटती थी। लेकिन, उसके नाखून बढ़ते भी बड़ी तेजी से थे। पतली लंबी-लंबी अँगुलियाँ थीं। जब वह पैदा हुआ था, उसी दिन उसकी लंबी उँगलियों की पहचान किसी ने कर ली थी। वह बोला था, 'कलाकार की उँगलियाँ हैं, लंबी-लंबी।'

अब पता नहीं क्या बनेगा। गौरव इस पर ज्यादा नहीं सोचता। बस पढ़-लिख कर अपने पैरों पर खड़ा हो जाए। तैरना सीख ले, गिटार बजाए और फुटबॉल खेले। हाँ, बड़ा हो जाएगा तो हम दोनों एक बार लद्दाख भी जाएँगे। जरूर। और हो सका तो पहाड़ों पर ट्रैकिंग करने। फूलों की घाटी, पवाली कंठा, सुंदरबन। और नेपाल में पुन हिल। गौरव ने कई ट्रैकिंग रूटों के नक्शे अपने मन में खींच रखे थे। यही सब सोचता हुआ वह चुपचाप अपने बिस्तर में आ गया। सुबह से थका हुआ था। उसे तुरंत ही नींद आ गई।

लेकिन रात नींद और होश के बीच झूलती रही। सब को सोते देख सात्विक ने अचानक अपनी आँखें खोल लीं। जैसे सबके सो जाने का इंतजार कर रहा हो। ऊपर पंखे से बँधे लाल, हरे और नीले गुब्बारे पर उसकी निगाहें टँगी रहीं। अक्सर ही वो अपनी गोल-गोल आँखों से पंखे पर बँधी इन बड़ी-बड़ी चीजों को ध्यान से देखने लगता था। गुब्बारों को देखकर कुछ खुशी से वह किलकने भी लगा। अपने हाथों-पैरों को तेजी से फेंकने लगा। उसके पैर से कंबल हटने लगा। अपने पैरों को सायकिल पर पैडल की तरह चलाते हुए उसने ऊपर से कंबल हटा दिया। उसके किलकने की आवाज सुनकर गौरव की नींद खुल गई। उसने धीरे से सात्विक के गालों को छुआ। सात्विक उसकी तरफ कुछ अनिश्चित सा होकर देखने लगा। वो उसे ऐसे ही देखता था। थोड़ा-थोड़ा सा। कभी पहचानते हुए तो कभी बेपहचान के।

गौरव ने उसे अपनी गोद में उठा लिया। उसके पोतड़ों की जाँच की। वे गीले नहीं थे। अपनी गोद में लेकर सात्विक को गौरव झुलाने लगा। इससे खुश होकर सात्विक किसी तरंग की तरह की अपने पैरों को झटका दे देता। नेहा गहरी नींद में सो रही थी। सात्विक की किलकारियों से भी उसकी नींद नहीं टूटी। गौरव उसके चेहरे को ध्यान से देखने लगा। आँखों के पास हल्के काले गड्ढे दिख रहे थे। माथे पर झुर्रियाँ तो नहीं लेकिन हल्की झाईं जैसा कुछ दिखने लगा था। बहुत ही कम सो पाने के चलते हर समय एक चिड़चिड़ापन उसके स्वभाव में बैठ गया था। नींद में भी वही दुश्चिंता उसके चेहरे पर बहुत मुखर होकर सामने आ रही थी।

नेहा के चेहरे को देखते हुए गौरव की चिंता और बढ़ने लगी। क्या होगा। आगे क्या होगा। जीवन कैसे आगे चलेगा। गौरव की आँखों में भविष्य की चिंताएँ तिरने लगीं। अपने हाथों में लेकर पहले तो वह सात्विक को थपकियाँ देता रहा। फिर उसे हल्का सा निंदाता देखकर उसने सात्विक को अपने हाथों में लेकर हल्का-हल्का झुलाना शुरू कर दिया। नींद और चिंताएँ गौरव पर भी भारी होने लगीं। एक-एक दिन मुश्किल से बीत रहे थे। हर दिन की शुरुआत गौरव इसी एक चिंता से करता कि आगे क्या होगा। अब

क्या होने वाला है। नींद गहरी होने लगी। सात्विक की किलकारियाँ खामोश होने लगी। गौरव उसे झुलाता रहा। नींद और होश के बीच अचानक उसे लगा कि वह सात्विक को लेकर बालकनी के पास खड़ा है। अपनी दोनों हथेलियों का झूला बनाकर वह सात्विक को झुलाए जा रहा है। सात्विक उसकी तरफ देखकर किलकारियाँ भर रहा है। लेकिन, उसके हाथों की पकड़ ढीली हो रही है। सात्विक उसके हाथों से छूट रहा है। वह बालकनी से नीचे बस गिरने को है।

नहीं, अचानक ही गौरव के होश जाग जाते। सात्विक को झुलाते-झुलाते वह खुद भी झपकी में झूलने लगा था। उसके हाथों से बस सात्विक छूटने को ही था। हथेलियों की नरमाई और हल्के झूले में वह कब का सो चुका था। गौरव ने उसे हल्के से बिस्तर पर लिटा दिया कि उसकी नींद न टूटने पाए।

लेकिन, इतने में गौरव की नींद टूट गई। अब उसने अपनी आँखें बंद की तो उनमें नींद नहीं थीं। आँखों को बंद करके वह बैठे-बैठे ही न जाने कहाँ-कहाँ की बातें सोचने लगा। कभी तो नींद आँखों पर आकर कब्जा जमाती तो कभी बस यूँ ही दिखावा करके भाग जाती। उस दिन, पूरी रात कुछ ऐसे ही नींद और होश के बीच झूलती रही।

अगले दिन जब गौरव उठा तो रात भर की कशमकश उसके पीछे पड़ी हुई थी। दिन की शुरुआत भी कुछ अच्छी नहीं हुई। गौरव सुबह जल्दी उठता है। सुबह उठकर उसने चाय बनानी शुरू की। चाय का पानी चढ़ाया। चायपत्ती डाली। अदरक डाला। जब पानी खौलने लगा, उसने दूध डाला। लेकिन, कुछ ही देर में दूध के थक्के जम गए। चाय फट गई। पूरा मूड खराब हो गया। खैर, अपनी कोफ्त पर काबू पाते हुए उसने किसी तरह चायदानी अच्छी तरह से धोई। इसके बाद दोबारा चाय चढ़ा दी। इस बार बड़ी सावधानी से दूध डाला। चाय छानने के बाद वह नेहा को जगाने चला गया।

नेहा और गौरव दोनों चाय पीते रहे। गौरव ने पूरा अखबार खोल डाला। एसएसपी के घर के नजदीक ही डकैती पड़ गई थी। सुबह सैर पर निकली महिला के गले से चेन खींच ली गई थी। बल्लीवाला चौक पर कोई फ्लाईओवर बनने वाला था जो लोगों को जाम से निजात देने वाला था। दोस्तों पर ऐतबार कर उनके साथ पार्टी करने गई छात्रा बलात्कार का शिकार हो गई थी। इस तरह की खबरों पर चलते-चलते वह दो ट्रकों की टक्कर में एक मरा जैसी हेडिंगों तक भी पहुँचने लगा।

पहले पेज की खबरों में प्रधानमंत्री ने देश के उद्योगपतियों से नहीं घबराने की अपील की थी। औद्योगिक क्षेत्रों की तरफ से मंदी से निपटने के लिए बेल आउट पैकेज की माँग की जा रही थी। दरअसल, ये बेल आउट शब्द अमेरिका में पैदा हुआ था और वहीं

से चलकर भारत आ पहुँचा था। अखबार के संपादकीय पेज पर इस आर्थिक मंदी के कारण और निवारण पर भी प्रकाश डाला गया था।

अमेरिका में लोगों को घर चाहिए थे। घर बनाए गए। हजारों-लाखों आवासीय योजनाएँ। लोगों को लुभाने वाली। वन बीएचके, टू बीएचके, थ्री बीएचके, डुप्लेक्स, पेंटा हाउस। हर तरह के घर। जिन लोगों के पास पैसा था उनके पास पहले से ही घर था। फिर कहा गया कि रियल स्टेट में इनवेस्टमेंट सबसे अच्छा है। आज प्रापर्टी खरीदी है तो कुछ ही सालों में वही प्रापर्टी आपको दुगुनी रकम देकर जाएगी। खरीद लो, खरीद लो। अब जिनके पास पहले से ही घर थे उन्होंने और घर खरीदे। रहने के लिए नहीं। निवेश के लिए। बेचने के लिए। जब मौका आएगा, तब बेच देंगे। पैसा अच्छा मिलेगा। लोगों ने लोन ले-लेकर घर खरीदे। लेहमन ब्रदर्स ने जिनके पास भी पैसा कम पड़ा, उन्हें पैसा दिया। कोई बात नहीं, आपके पास घर की कीमत का दस प्रतिशत है। बाकी 90 प्रतिशत हम फाइनांस कर देंगे। खरीद लो घर, बस महीने के महीने किश्तें चुकाते रहो। गंभीर आशावाद के पीड़ितों ने घर खरीदना जारी रखा। खूब घर खरीदे गए। बिल्डरों की मौज आई। खूब लोहा-सरिया बिका। खूब सीमेंट बिका। पेंट, शीशा, पत्थर, लकड़ी सबकुछ की इंडस्ट्री ने खूब रफ्तार पकड़ी।

पर अफसोस कि सब कुछ ऐसे ही नहीं चलता रहा। बेचने वाले बढ़ गए। खरीदने वाले कम पड़ गए। लोगों ने जिन मकानों को अच्छे इनवेस्टमेंट के हिसाब से खरीदा था। उन्हें बेचना चाहा। कि अब तो पैसा मिल जाए। लेकिन खरीददार ढूँढ़ना मुश्किल होने लगा। जिंदगी की परेशानियाँ बढ़ने लगीं। बैंक की किश्त जिंदगी की जरूरतों को मुँह चिढ़ाने लगी। किश्तें भरना दुश्वार हो गया। लोग डिफाल्टर होने लगे। कहाँ से किश्त चुकाएँ। जब पैसा ही नहीं। लोग अपने इनवेस्टमेंट का बोझा ढोने लायक नहीं बचे। लेहमन ब्रदर्स ने लोन न चुका पाने वाले कुछ लोगों का तो घर जब्त कर लिया। लेकिन, ऐसे तो कारोबार नहीं चलेगा।

तो उन्होंने एक नायाब तरीका निकाला। उन्होंने कर्ज चुकाने के लिए भी कर्ज देना शुरू कर दिया। अच्छे दिन फिर से आएँगे, इस उम्मीद में लोगों ने कर्ज चुकाने के लिए कर्ज लिए। लेकिन अब किश्तें भी दोगुनी हो गईं। पहले कर्ज की। फिर उस कर्ज को चुकाने के लिए लिए गए कर्ज की। अच्छे दिनों की यह उम्मीद भी ज्यादा दिनों नहीं टिकी। लोगों के लोन सरेंडर होने लगे। किश्तों की उगाही मुश्किल हो गई। हालात यहाँ तक बिगड़े कि लेहमन ब्रदर्स को साँप सूँघने लगा। और अमेरिका के सबसे बड़े बैंकों में शामिल रहे लेहमन ब्रदर्स ने सितंबर 2008 में खुद को दिवालिया घोषित कर दिया।

छह अरब डॉलर से ज्यादा पूँजी वाला, दुनिया के कई देशों में शाखाओं वाला, कई हजार लोगों को नौकरी देने वाला बैंक जब धराशायी हुआ तो दुनिया में जैसे भूचाल आ गया। शेयर बाजार रसातल में चले गए। अमेरिका में सितंबर 2001 में हुए हमलों के समय बाजार जितने नीचे गए थे, लगभग उसी स्तर पर सेंसेक्स गिर गया। अब सेंसेक्स तो इस अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा थी। जब धड़कन गायब होने लगी तो बाजार मरणासन्न हो गए। आर्थिक भूचाल आ गया। कंपनियों ने इस भूचाल से निपटने का एक ही तरीका निकाला। अपने खर्च कम करो। करोड़ों-अरबों की तनख्वाह लेने वाले मैनेजरों ने बताया कि कंपनी में बहुत सारे ऐसे लोग हैं जिनका श्रम उत्पादक नहीं। उनकी नौकरी बोझ है। ये नौकरियाँ कम कर दी जाएँ तो कंपनी के बहुत सारे पैसे बच सकते है। घाटा कम किया जा सकता है। लोगों की नौकरियाँ छीनी जाने लगीं। लोग बेरोजगार होने लगे। बेरोजगार लोगों ने अपनी जिंदगी की जरूरतें और सीमित कर दीं। एक किलो दूध की बजाय एक पाव से काम चलाया जाने लगा। पिक्चर देखनी बंद हो गई। शापिंग बंद, रेस्तरां में खाना बंद। नतीजा हुआ कि सिनेमा में मंदी, शापिंग में मंदी, रेस्तरां में मंदी। कारों की खरीद बंद। टीवी की खरीद बंद। फ्रिज बिकना बंद हो गए। दुकानों पर रखे एसी पर धूल जमने लगी। और इन सभी उद्योगों में हजारों-लाखों लोगों की नौकरियाँ चली गईं।

इतनी ढेर सारी सूचनाओं से घबराकर गौरव ने अखबार बंद कर दिया और चुपचाप बाथरूम में चला गया। पानी ज्यादा गरम हो गया था। बाल्टी से इमरसन रॉड हटाने के बाद उसने पहले तो पानी को मग से ऊपर-नीचे किया। कई बार पानी ऊपर से तो गरम हो जाता है, लेकिन नीचे ठंडा रहता है। नहाना शुरू करो तो पहले तो गरम पानी मिलता है, पर बाद में ठंडे पानी से नहाना पड़ता है। गरम पानी से गरम हुए शरीर को ठंडे पानी की मार ज्यादा भारी पड़ती है। इस तरह के धोखे का शिकार कई बार हो चुके गौरव ने पानी के ऊपर-नीचे का तापमान बराबर करने की कोशिश की। इसके बाद भी जब पानी गरम लगा तो उसने दो मग पानी बाल्टी से निकालकर बहा दिया। इसके बाद बाल्टी में नल चला दिया। छत पर रखी टंकी में रात भर ठंडाया हुआ पानी नल में से निकलने लगा। उसने अपने बालों में शैंपू लगाया और हल्के से पानी डाला। तो हल्की ठंड की फुरेरियाँ सी दौड़ीं, फिर पानी की गरमाई अच्छी लगने लगी। गुनगुने पानी को वह अपने शरीर पर रगड़ने लगा। गरम पानी को त्वचा पर ज्यादा से ज्यादा फैलाने में उसके हाथ लगे रहे। लेकिन, दिमाग में कहीं कोई एक बात अटकी हुई थी।

फालतू। हाँ, फालतू स्टाफ कम किया जाना है। जिनकी जरूरत नहीं है। क्या होता है ये फालतू। क्या उसके परिवार को उसकी जरूरत खतम हो गई। अपने घर की पूरी गाड़ी

खींचने वाला कोई आदमी अपने ऑफिस में फालतू कैसे हो सकता है। कंपनी को उसकी जरूरत नहीं है। ये कोई महीने भर पहले की बात होगी, जब फालतू साबित कर दिए जाने का डर हर किसी के चेहरे पर दिखाई पड़ने लगा था। सावधान रहो, लिस्ट तैयार हो रही है। इस समय काम में जरा भी लापरवाही ठीक नहीं। ये चेतावनी भरी एक आवाज थी, जो ऑफिस में चुपके-चुपके हर कान तक पहुँच रही थी। तो क्या यहाँ भी छँटनी होगी। लोग निकाले जाएँगे। ये चेतावनी हर समय उसके दिमाग में अटकी रहती। हालाँकि, बाद में कोई समझाने भी लगा कि नहीं तुम्हारा नंबर थोड़े ही है। काम करने वालों की जरूरत तो हमेशा रहेगी। जो काम नहीं करने वाले हैं, उन्हें ही निकाला जाएगा। कंपनी को घाटा हो रहा है। मोटी-मोटी तनख्वाहें लेकर भी जिन्होंने काम नहीं करने की कसम खा रखी है, उन्हें बाहर कर दिया जाएगा। इससे कंपनी का घाटा भी पूरा हो जाएगा और फालतू स्टाफ भी हट जाएगा।

इन्हीं खयालों में डूबा हुआ गौरव बाहर आया। हर बात के जवाब में हूँ-हाँ करते हुए उसने नाश्ता किया और मीटिंग के लिए देर न हो जाए, यह सोचता हुआ जल्दी से तैयार होकर चल दिया।

मन की उलझन इस तरह हावी हो गई थी कि गली के नुक्कड़ पर एक क्षण रुकने का गौरव को ख्याल ही नहीं रहा। बाइक एक खास गति में बुड़-बुड़ करती हुई सीधे ऑफिस में ही जाकर रुकी।

अभी दस बजने में पाँच-सात मिनट बाकी ही थे कि गौरव ऑफिस पहुँच गया। कहने को उसकी फील्ड जॉब थी। सुबह की मीटिंग में सबके साथ दिन भर के कामकाज के बारे में विचार-विमर्श होता था। इसके बाद वे फील्ड में निकल जाते। शाम को पाँच-छह बजे तक सभी लोग फिर से ऑफिस पहुँच जाते। दिन भर के कामकाज की समीक्षा यहाँ पर होती थी। अक्सर ही इसमें देर हो जाती।

देहरादून की शादियों की ये खास बात थी। पार्टी में जहाँ महिलाओं के लिए महिला संगीत का इंतजाम रहता तो पुरुषों के लिए एक कोने में कहीं कॉकटेल पार्टी का। यूँ तो नवीन की बहन की शादी की दावत ऑफिस में सभी लोगों को दी गई थी। लेकिन बॉस लोगों के वहाँ पर पहुँचने की उम्मीद नहीं के बराबर थी। रात के लगभग साढ़े नौ बजे गौरव वहाँ पहुँचा तो सभी का जमघट लगा हुआ था। बीयर, व्हिस्की, रम और ब्रांडी की बोतलें रखी हुई थीं। यहाँ पर स्वतंत्रता पूरी थी। चाहे जैसा भी पैग बनाओ। बस इतना होश रहे कि घर पहुँचाने की जिम्मेदारी किसी की नहीं है। यानी घर जाने लायक बचे रहो।

रायल स्टैग की बोतल और एक बोतल सोडा और चार-पाँच गिलास अमित थपलियाल ने अलग कर लिए। मेहमानों की भरमार हो चुकी थी। बाहर के सर्द मौसम की तुलना में यहाँ काफी गहमागहमी थी। सेना के अधिकारियों के लिए इस्तेमाल होने वाले एक क्लब की यह बिल्डिंग थी। सेना से रिटायर हुए नवीन के किसी रिश्तेदार की बदौलत पार्टी के लिए यह बिल्डिंग नसीब हुई थी। एक तरफ तंदूर लगा हुआ था। अमित ने तंदूर के पास ही अपनी टेबल लगवा ली।

दोस्तों का जमघट लग गया। मेज पर गिलास सजाकर अमित शराब ढालने लगा।

कुछ लोगों को बोतल का ढक्कन खोलने के साथ ही चढ़ने लगती है। शराब की महक का ऐसा ही असर अनुपम पर होता था। इसके साथ ही शराब और नशे को दर्शन के स्तर पर पहुँचाने का उसका प्रयास भी शुरू हो जाता। 'पहली छलाँग तो लंबी ही होती है। तभी तो आगे के लिए उत्साह बना रहेगा। इसलिए पहला पैग तो बड़ा ही होगा। कभी भी अपना टारगेट छोटा मत रखो दोस्तों।'

राजेश की आवाज में नखरा बहुत था। उसके गिलास में जैसे ही अमित ने शराब की बोतल का मुँह ढेढ़ा किया, उसने यही कहना शुरू किया, 'बस-बस, इससे ज्यादा नहीं भाई, घर भी तो जाना है।' लेकिन, इस ना-नुकुर के बाद भी मजाल है कि कोई उससे ज्यादा गटक जाए। गौरव चुपचाप अपने गिलास में शराब ढाली जाते हुए देखता रहा। गौरव और विकास का गिलास भी भरने के बाद सभी ने गिलास ऊपर उठाए, ऊँचा किया और चीयर्स के साथ ही शराब की चुस्कियाँ भरने लगे। दो पैग लगने के बाद ही सभी के गाल तमतमाने लगे थे। शराब के पैग के साथ ही अनुपम के दार्शनिक स्तर में भी इजाफा हुआ। अपनी सिगरेट सुलगाने और सिगरेट की डिब्बी सबके आगे करते हुए उसने कहना शुरू किया, 'भाई शराब की सबसे अच्छी सहेली सिगरेट ही होती है। दोनों मेड फॉर ईच अदर हैं। एक-दूजे के लिए बने हैं। पैग पे पैग चढ़ाते जाओ लेकिन जब तब तक सिगरेट का धुआँ अंदर नहीं जाता, बस मजा नहीं आता। दोनों एक-दूसरे की बाँहें पकड़कर चलते हैं।'

एक ही दफ्तर के लोगों का जमावड़ा धीरे-धीरे उनकी टेबल के आस-पास लगने लगा। दिन में कई-कई जोड़ी आँखें एचआर डिपार्टमेंट की हर हरकत पर लगी रहती थीं। वहाँ से आने वाले बुलावे को लेकर हर कोई आशंकित था। दिन में राजेश्वर सिंह का बुलावा था। एचआर के केबिन से निकलने के बाद वे सीधे अपनी टेबल पर पहुँचे थे। वहाँ से अपना बैग उठाने और कंप्यूटर बंद करने के बाद वे ऑफिस से चले गए। बाद में किसी

ने फोन करके उनसे पूछा था। कंपनी की ओर से उन्हें महीने भर का नोटिस मिल गया था।

'कंपनी में सोलह साल से काम कर रहे थे राजेश्वर सिंह।' किसी ने बताया।

'हाँ, कभी किसी से ज्यादा बात भी नहीं करते थे। बस अपने काम से काम।'

फिर कुछ देर तक राजेश्वर सिंह के बारे में इसी तरह की बात होने लगी। उनके बच्चे कितने हैं। घर कहाँ है। अब कैसे करेंगे। अपने बगल की सीट पर बैठे आदमी की नौकरी जाने का तनाव बाकियों के चेहरे पर भी साफ था। गौरव के सेक्शन में कुल 24 लोग थे। इस पूरी टीम से अभी तक छह लोग कम किए जा चुके थे। कितने और लोग वहाँ से हटाए जाएँगे, इसका कोई अंदाजा किसी को नहीं था।

मेज पर रखे शराब के गिलास को घूरते हुए अनुपम ने कहा, 'ये तो साला सरासर मनमानी है। जब चाहो आदमी को काम पर रखो, जब चाहो निकाल दो।'

'कंपनी को कोई घाटा-वाटा नहीं है। सरकार से सब्सिडी के लिए मंदी का नाटक किया जा रहा है।' राजेश बोल पड़ा।

गौरव अभी तक चुप-चाप पीता रहा था। अब वो भी चुप नहीं रह सका। उसका क्षोभ भी खुलकर सामने आने लगा, 'क्या हो रहा है। साला ऐसा लगता है कि जैसे हम आदमी ही नहीं है। मुर्गों के दड़बे में हाथ डालकर कसाई एक-एक को बाहर निकालता है। और जिबह से बचने के लिए हम अपने ही दड़बे में तड़फड़ाते हैं। उसकी छूट से भागने की कोशिश करते हैं। बस हम उसके हाथों से में न फँस जाएँ। लेकिन, आज मान लो बच भी गए तो कल फिर तो हमारी बारी आ सकती है।'

कई दिनों की जमी हुई भड़ास में गौरव की आवाज तेज हो गई। उसकी तेज आवाज से आसपास के और भी लोग टेबल के पास इकट्ठा होने लगे। राजेश ने धीरे से गौरव को उठाया और एक किनारे ले गया। 'दादा, आप थोड़ा ध्यान रखो। आप को पता नहीं है कि कहाँ कि बात कहाँ पहुँच जाती है। बस चुप रहो। ज्यादा मत बोलो।'

'क्या यहाँ की बातें भी पहुँच जाएँगी।'

'दादा, बस आप समझा करो। कौन क्या है। क्या पता।'

अपने कान में कही गई बातों को सुनकर गौरव चुपचाप टेबल पर चला आया। उसने अपना गिलास उठाया और एक ही घूँट में उसे खाली करते हुए टेबल पर रख दिया।

इसके बाद सबसे विदा लेकर वह चुपचाप बाहर निकल आया। बाइक उठाई और किसी तरह से झूमते-झामते बाइक स्टार्ट करके वहाँ से घर की तरफ चल पड़ा।

घर पहुँचते हुए रात के साढ़े ग्यारह बज गए। नेहा ने दरवाजा खोला और गौर से उसका चेहरा देखने लगी। उसके मुँह से आती शराब के भभके से नेहा की आँखें जलने लगीं। गौरव ने आँखें नीची कर लीं। उससे निगाह मिलाने से बचता हुआ वह धीरे से जाकर कुर्सी पर बैठ गया। मफलर और दस्ताना उतारा। गुस्से में तिलमिलाते हुए नेहा इतने में अंदर जाकर लेट गई। गौरव ने लांग कोट उतारा। बाथरूम में जाकर हाथ धोया। मुँह पर पानी के छींटे मारे। ठंडे पानी से गालों की तमतमाहट थोड़ा कम हो गई।

सामने बिस्तर पर नेहा और सात्विक सोए हुए थे। सोते हुए सात्विक ने अपने निचले होंठों को जरा सा भींच लिया था। उसमें से लार की एक हल्की सी रेखा निकलकर उसके गाल पर सूख गई थी। उसके चेहरे पर अपार संतोष के भाव थे। उसके आस-पास जो कुछ भी हो रहा था, वह उससे निर्लिप्त था। उसके पास बस अपना अवलंबन था। जबकि, उसके बगल में लेटी हुई नेहा को जरूर अभी नींद नहीं आई होगी। उसने बस चुप-चाप अपनी आँखें बंद कर रखी होगी और अंदर ही अंदर गुस्से से भुनभुनाते हुए तड़प रही होगी। गौरव ने बत्तियाँ बुझा दीं और बिस्तर के एक किनारे जिधर वह सोता था, जाकर लेट गया। कंबल को अपने ऊपर खींचकर उसने अपनी आँखें बंद कर ली हैं। नींद कहीं नहीं थी। लेकिन, आँखों के बंद होते ही अँधेरा छा गया।

एक ही बिस्तर पर दोनों अपने-अपने खयालों के टापुओं पर अकेले रह गए थे। चारों तरफ उनकी चिंताओं का समुंदर लहरा रहा था। चिंताओं का अलग-अलग रंग इन समुंदरों के रंगों में भी उतरा हुआ था। अपने टापू पर पड़े, जीवन के लिए अलग राह निकालने की चिंताओं में डूबे वे दोनों पहली बार अकेले हो चुके थे।

(शीर्षक प्रिय कथाकार रवींद्र कालिया की चर्चित कहानी 'सिर्फ एक दिन' से)

,